सोमनाथ मंदिर में गैर हिन्दुओं का प्रवेश वर्जित

गुजरात के सोमनाथ मंदिर में हिन्दुओं के अतिरिक्त किसी अन्य के प्रवेश के लिए ट्रस्ट कमेटी की अनुमति अनिवार्य कर दी गई है। इसका अर्थ हुआ कि सोमनाथ मंदिर में हिन्दुओं के अतिरिक्त अन्य किसी का स्वतंत्रतापूर्वक प्रवेश प्रतिबंधित होगा।

मैं अब तक समझता रहा हूॅ कि हिन्दू एक समाज व्यवस्था है, जीवन पद्धति है, विचारधारा है। हिन्दू का किसी भौतिक संगठन से कोई सम्बन्ध नहीं है। हिन्दू की पहचान व्यक्तिगत आचरण तक सीमित है। हिन्दुओं की धार्मिक मान्यताएॅ समाज सशक्तिकरण तथा चरित्र निर्माण की दिशा में प्रेरित करने तक सीमित है। मंदिर की ट्रस्ट कमेटी ने हिन्दू की इस पहचान से हटकर कुछ अलग पहचान बनाई है, जिसमें गुणों की पहचान छोड़कर चोटी, यज्ञोपवीत, पूजा पद्धति, मंदिर, गाय, गंगा, आदि पर विश्वास को महत्वपूर्ण माना है। स्पष्ट है कि पहले प्रकार के हिन्दू यदि दूसरे प्रकार के हिन्दू की परीक्षा में खरे नहीं उतरते हैं तो उन्हें उक्त मंदिर में प्रवेश के लिए अनुमति लेनी होगी। मुझे लगता है कि सोमनाथ मंदिर पर ऐसे लोगो का अधिकार हो गया है जो इस्लाम की मान्यताओं के अधिक निकट हैं। चोटी–दाढ़ी की पहचान अथवा संगठन को प्राथमिकता देना, इस्लाम की प्रमुख पहचान रही है। मैं समझता हूॅ कि सोमनाथ मंदिर की व्यवस्था अब वास्तविक हिन्दुओं से निकलकर नकली नामधारी संगठन प्रधान हिन्दुओं के अधिकार क्षेत्र में आ गई है। मैं समझता हूॅ कि मेरी आस्था पहले प्रकार के हिन्दुत्व में है, दूसरे प्रकार के हिन्दुत्व में नहीं और सोमनाथ मंदिर पर दूसरे प्रकार के तथाकथित हिन्दुओं ने कब्जा कर लिया है। इसलिए मैंने यह निश्चय किया है कि जब तक सोमनाथ मंदिर ऐसे नकली हिन्दुओं से मुक्त नहीं हो जाएगा तब तक मैं उस मंदिर में प्रवेश नहीं करुॅगा। दुनिया के जो हिन्दू पहले प्रकार की परिभाषा से सहमत है, उन्हें भी ऐसे नकली हिन्दुओं के कब्जे वाले सोमनाथ मंदिर से दूरी बनाकर उसे वास्तविक हिन्दुओं के नियंत्रण में लाने का प्रयास करना चाहिए।

मैंने तो सुना है कि लालकृष्ण आडवानी तथा नरेन्द्र मोदी भी उक्त मंदिर की ट्रस्ट कमेटी में शामिल हैं। इन दोनों को यह स्पष्ट करना चाहिए कि वे ट्रस्ट के उक्त निर्णय से सहमत हैं या असहमत। किसी भी व्यक्ति को दोनों ओर रहने की सुविधा नहीं दी जा सकती है। दस पॉच दिनों में स्पष्ट हो जाएगा कि आडवानी, नरेन्द्र मोदी सरीखे अन्य लोग इस सम्बन्ध में क्या विचार रखते हैं!

(1) श्री मनोज कुमार द्विवेदी, ऋषिकेश

प्रश्न–ज्ञानतत्व 311 में पेज संख्या 8 पर ''कश्मीर में स्व. श्यामा प्रसाद मुखर्जी का प्रवेश एक भूल थी'' ऐसा आपने लिखा है। इस पर आप अपना विचार विस्तृत स्वरुप में देने की अथवा ज्ञानतत्व में छापकर समाज के सभी लोगो तक पहुॅचाने की कृपा करें।

उत्तरः–श्यामा प्रसाद मुखर्जी स्वतंत्रता के पूर्व हिन्दू महासभा के साथ जुडे रहे। उन्होंने जीवन भर हिन्दुओं के पक्ष में राजनैतिक लडाई लडी। स्वतंत्रता के दस वर्ष पूर्व ही उन्होंने द्विराष्ट्र का सिद्धान्त स्वीकार कर लिया था और कह दिया था कि मुसलमानों को यदि पाकिस्तान प्रिय है तो वे बनाकर यहॉ से चले जाए। मुखर्जी ने स्वतंत्रता की लडाई में कोई विशेष योगदान दिया हो ऐसी जानकारी मुझे नहीं है। किन्तु श्यामा प्रसाद मुखर्जी की उच्च प्रतिभा तथा योग्यता को देखते हुए पंडित नेहरु ने उन्हें अपने मंत्रिमंडल में शामिल किया। वैचारिक धरातल पर हिन्दुओं का विशेष पक्षधर होते हुए भी उन्होंने गॉधी हत्या की खुली आलोचना की थी, किन्तु मंत्रिमंडल में रहते हुए भी कश्मीर की नीति से वे सहमत नहीं थे। उनका मानना था कि

कश्मीर में धारा 370 और विशेष राज्य का दर्जा देना ठीक नहीं है। उन्होंने मंत्रिमंडल छोड दिया और राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के प्रचारक के रुप में काम करने लगे। उन्होंने संघ प्रचारक के रुप में संघ की सलाह पर जनसंघ के नाम से राजनैतिक पार्टी बनायी और संघ की सलाह से ही कश्मीर का कानून तोडकर कश्मीर में प्रवेश कर गए। उक्त कानून तोडने के आरोप में कश्मीर सरकार ने उन्हें गिरफ्तार कर लिया और एक–दो महिने के अन्दर ही जेल में उनकी मृत्यु हो गई।

धारा 370 भारत और कश्मीर के बीच एक विशेष समझौता के रुप में मानी गई। इसका अर्थ है कि कश्मीर भारत का एक विशेष क्षेत्र है, अन्य प्रदेशों की तरह नहीं। यदि भारत सरकार ने कश्मीर को विशेष राज्य का दर्जा देकर कोई भूल की है तो भारत में रहकर भारत सरकार के विरुद्ध कोई आन्दोलन किया जा सकता था, न कि कश्मीर में प्रवेश करके। कल्पना करिए कि हम भाइयों के सम्पत्ति बॅटवारे में परिवार का मुखियॅा गलत तरीके से किसी भाई का पक्ष लेकर उसे ज्यादा सम्पत्ति दे दे, तो उक्त भाई को दी गई अधिकृत सम्पत्ति पर बलपूर्वक प्रवेश करना या तो मूर्खता है या दबंगई। कश्मीर भारत का अंग होते हुए भी विवादास्पद तो रहा ही है। भारत सरकार इस विवाद को कश्मीर के मुस्लिम बहुल घाटी के लोगों को सहमत करके निपटाना चाहती थी और कट्टरवादी हिन्दू उसे बलपूर्वक तत्काल निपटाना चाहते थे। यदि भारत सरकार और कट्टरपंथी हिन्दू मिलकर किसी एक मार्ग पर चले होते तो कश्मीर का मामला इतना नहीं उलझता किन्तु कट्टरपंथी हिन्दुओं, जिनका राजनैतिक नेतृत्व श्यामा प्रसाद मुखर्जी कर रहें थे, उनका उद्देश्य कश्मीर समस्या को शान्ति पूर्वक निपटाने की अपेक्षा पूरे भारत में कश्मीर समस्या के माध्यम से वोट बैंक बढाने तक सीमित रहा। कश्मीर में प्रवेश करने के लिए परमिट लेने का तथाकथित प्रत्यक्ष विरोध करने पर मुखर्जी जेल गए किन्तु भारत में ही छत्तीसगढ के बस्तर इलाके में बाहरी लोगों के प्रवेश करने पर परमिट लेने के कानून का किसी जनसंघी या संघी नेता ने कभी विरोध नहीं किया, क्योंकि दोंनो के वोट बैंक विस्तार में अन्तर था। गॉधी हत्या और श्यामा प्रसाद मुखर्जी की तथाकथित हत्या अथवा मृत्यु ने कश्मीर के मुसलमानों का दिल जीतने के प्रयासों को नुकसान पहॅुचाया। मैं सहमत हूॅ कि मुसलमानों का दिल जीतना आसान काम नहीं है और सरकारी प्रयत्न असफल ही होते किन्तु इस तरह श्यामा प्रसाद मुखर्जी का कश्मीर में प्रवेश करना सरकारी प्रयत्नों की असफलता को स्पष्ट रुप से सिद्ध होने में बाधक बना। मेरे विचार से श्यामा प्रसाद मुखर्जी को कुछ वर्षो तक कश्मीर प्रवेश छोडकर भारत में ही अपना दबाव बनाना चाहिए था, लेकिन श्री मुखर्जी ने राजनैतिक स्वार्थ की जल्दबाजी में कश्मीर घाटी के मुसलमानों को एक अवसर दे दिया कि हिन्दू और मुसलमान एक साथ नहीं रह सकते। श्यामा प्रसाद मुखर्जी की मृत्यु के बाद भी जो लोग वोट बैंक के लालच में कानून तोडकर या बिना सर्वसम्मत सहमति के बलपूर्पक कश्मीर में भारत का झण्डा फहराने की बात करते हैं, वे सब भी मेरे विचार में राजनैतिक स्वार्थ में कश्मीर समस्या को और अधिक उलझा रहे हैं। भारत के जो नेता कश्मीर में भारत का झण्डा फहराने को इतना आतुर हैं, उनमें से किसी में इतनी हिम्मत नहीं कि वे छत्तीसगढ के बस्तर में जाकर बलपूर्वक भारत का झण्डा फहरा सकें। कश्मीर और बस्तर में आसमान, जमीन का फर्क है। बस्तर में झण्डा फहराने के लिए भारत सरकार तथा भारत का प्रशासन आपके साथ सहमत और सहायक भी है जबकि कश्मीर में झण्डा फहराने के मामले में आपकी अभी सर्वसम्मति नहीं बनी हैं, किन्तु आप वोटो की लालच में सारे हिन्दुस्तान की चिन्ता छोडकर कश्मीर–कश्मीर की अकेले रट लगाए रहते हैं। मैं इस अकेले रट लगाने के पक्ष में न पहले था और न अब हूॅ। मैं हमेशा यह विश्वास करता हूॅ कि विवादास्पद मामलो में यदि मैं किसी एक पक्ष का सदस्य हूॅ तो बिना अपने पक्ष के लोगो की सहमति लिए अकेला दूसरे पक्ष से भिडने की शुरुआत मुझे मंगल पाण्डे के समान इतिहास प्रसिद्ध व्यक्तित्व तो बना सकती है किन्तु स्वतंत्रता की लड़ाई आगे सैकडों वर्षो तक टाले जाने का अपराधी भी बना सकती है।

इतिहास बताता है कि अतिवाद हमेशा नुकसान का कारण बनता है। नक्सलवादियों का समर्थन करके साम्यवादी पार्टी के लोग लगातार कमजोर होते जा रहे हैं। आतंकवादी मुसलमानों का अप्रत्यक्ष समर्थन करके शान्तिप्रिय मुसलमान भी सारी दुनिया में संदेह के घेरे में आ गए हैं। यहॉ तक कि निर्दोष मुसलमानों की हत्या का झूठा आरोप प्रचारित होने के आधार पर नरेन्द्र मोदी प्रधानमंत्री के पद तक जा पहुॅचे हैं। इसी तरह संघ परिवार द्वारा कुछ आतंकवादी हिन्दुओं का समर्थन भी संघ परिवार को लगातार कमजोर कर रहा है। नरेन्द्र मोदी लगातार मजबूत हो रहे हैं और आतंकवादी भाषा बोलने वाले कमजोर हो रहे हैं भले ही उन्होंने गेरुआ वस्त्र ही क्यों न पहन रखा हो। मुझे तो ऐसा लगता है कि नरेन्द्र मोदी लगातार मजबूत होंगे और संघ परिवार लगातार कमजोर होता जाएगा। मैं समझता हूॅ कि 1950 के आसपास का समय इस तरह का था कि श्यामा प्रसाद मुखर्जी का कश्मीर प्रवेश उस समय की स्थिति अनुसार अतिवाद की श्रेणी में आता है। यही कारण है कि आज तक जो सम्मान दीनदयाल उपाध्याय को मिला, अटल बिहारी बाजपेयी को मिला, वल्लभ भाई पटेल को मिला और मोदी को मिलने की सम्भावना है वह सम्मान श्यामाप्रसाद मुखर्जी को प्राप्त नहीं है और न भविष्य में ऐसी कोई सम्भावना है।

(2) चन्द्रभूषण सिंह, पोस्ट–भुजौनी, बलिया, यु0पी0 ज्ञानतत्व 7018

प्रश्न–मेरे विचार से सत्ता की प्राप्ति के लिए नीतिश कुमार, लालू प्रसाद ने जैसे हाथ मिलाकर अपने चरित्र के ऊपर दाग लगा लिया, उसी प्रकार बडी–बडी इमानदारी की बात करने वाले अरविन्द केजरीवाल ने भी योगेन्द्र व प्रशान्त भूषण को किनारे लगा दिया। लोकतंत्र में किसी का चरित्र पाक साफ नहीं रहेगा। वह सत्ता प्राप्ति के पहले तो बडी–बडी बाते करता है किन्तु सत्ता प्राप्त होते ही उसकी भाषा बदल जाती है। जैसे कि अरविन्द केजरीवाल है जो संविधान की शपथ तो खाते हैं किन्तु उस पर अम्ल नहीं करते हैं। उनको मालूम है कि दिल्ली पूरा राज्य नहीं है जिसके वे मुख्यमंत्री हैं, वह पूरे राज्य के मुख्यमंत्री की तरह काम करने की इच्छा रखते हैं जो मुंगेरी लाल के सपने जैसा है। किसी को एक बार ठग सकते हैं बार–बार नहीं।

उत्तरः– नीतिश कुमार, नरेन्द्र मोदी तथा अरविन्द केजरीवाल उन लोगों में है जो घोषित रुप से भ्रष्ट नही है, न ही साम्प्रदायिक है। यद्यपि नरेन्द्र मोदी को साम्प्रदायिक शक्तियों से मजबूरी में तालमेल करना पड रहा है, तो नीतिश कुमार को भ्रष्ट घोषित लोगों से। यदि भ्रष्टाचार हो रहा है तो साम्प्रदायिकता भी कम बुरी नहीं है। नीतिश कुमार, लालू प्रसाद से समझौता कर रहें हैं तो नरेन्द्र मोदी को भी शिवसेना अथवा अन्य कट्टरवादी हिन्दुओं को अपने साथ मिलाकर चलना पड़ रहा है। अरविन्द केजरीवाल की बात अलग है कि अभी तक उनके विषय में कोई अच्छी या बुरी धारणा निश्चित रुप से बनाना उचित नही है। वे अभी परीक्षण कालीन स्थिति से गुजर रहे हैं। प्रारम्भ में उन्होंने अन्य सभी राजनेताओं की अपेक्षा अधिक चरित्रवान और ईमानदार होने के लक्षण प्रकट किए थे। योगेन्द्र यादव और प्रशान्त भूषण को किनारे लगाने के बाद तथा दो करोड़ रुपया काला से सफेद करने की घटना सिद्ध होने के बाद यह स्पष्ट हो गया है कि वे अन्य सभी राजनेताओं की अपेक्षा अधिक चरित्रवान या ईमानदार नहीं है। किन्तु अब तक ऐसा कोई प्रमाण नही मिला है कि अरविन्द केजरीवाल, लालू प्रसाद, मुलायम सिंह, रामविलास पासवान, जयललिता आदि के समकक्ष घोषित हो चुके हो। मेरा अभी भी मानना है कि अरविन्द केजरीवाल, नरेन्द्र मोदी तथा नीतिश कुमार के स्तर से तो नीचे अवश्य हैं किन्तु अन्य राजनेताओं से उनकी तुलना करते समय कुछ और अधिक लक्षण प्रकट होने तक प्रतिक्षा करनी चाहिए।

(3) सत्यपाल शर्मा, बरेली उ0प्र0

प्रश्न—भारत गणराज्य के अभिन्न अंग कश्मीर में रहने वाले अल्पसंख्यक कश्मीरी पंडितों पर इतने अत्याचार और हिंसा के वार हुए कि उन्हें कश्मीर छोड़कर जान बचाकर भागना पडा। जमीन जायदाद वाले कश्मीरी पंडित पिछले 25 वर्षो से बडी दयनीय स्थिति में जीवन जी रहे हैं। नरेन्द्र मोदी सरकार ने कश्मीरी पंडितों की कालोनियॉ बनाकर कश्मीर में बसाने की घोषणा की। जिसका कश्मीर के आतंकवादी संगठन तथा कश्मीरी मुस्लिमों ने घोर विरोध शुरु कर दिया। जो अल्पसंख्यक हिन्दू कश्मीर के मूल निवासी हैं और अपने घरो को वापिस लौटना चाहते हैं उनकी केन्द्र सरकार भरपूर सहायता करे। कश्मीर के अलगाववादियों का उद्देश्य है कि कश्मीर से हिन्दुओं को भगाकर वहॉ अपना अधिकतम बहुमत बना लिया जाए तो भारत सरकार का भी कर्तव्य है कि कट्टरवादियों के सामने घुटने न टेके और कश्मीर से विस्थापित पंडितों को वहॉ बसाने का अपना वादा पूरा करे। इस ज्वलंत विषय पर अपने विचारों से अवगत कराए।

उत्तरः—कश्मीर भारत का एक विशेष क्षेत्र है, जहॉ बहुत सोच विचार कर ही कदम उठाया जा सकता है। कश्मीर के सम्बन्ध में कोई भी पहल करते समय विश्व जनमत का भी ख्याल रखना पड़ता है। किन्तु छत्तीसगढ का बस्तर क्षेत्र कोई ऐसा विशेष क्षेत्र नहीं है, जिसके लिए भारत को विश्व जनमत का ख्याल रखना पडे। कश्मीर के सम्बन्ध में पाकिस्तान की भी प्रतिक्रियाऍ ध्यान देनी पडती है तथा कश्मीर में रहकर भारत के विरुद्ध जहर उगलने वाले, आतंकवादी मुसलमानों के भी मामलो में चिन्ता करनी पडती है। मैं नही समझता कि आपने कश्मीरी पंडितों की तो इतनी चिन्ता की किन्तु छत्तीसगढ के बस्तर क्षेत्र से भगाए गए उन आदिवासियों की आपने कोई चर्चा नहीं की जो आज भी बस्तर से बाहर शरणार्थी कैम्पो में निवास कर रहे हैं। यहॉ तक कि नक्सलवादी इन कैम्पों में भी घुसकर इन शरणार्थियों की हत्या कर देते हैं, जबकि कश्मीर से बाहर रह रहे कश्मीरी पंडितों पर कोई अत्याचार नहीं हो रहा। मैं भी चाहता हूॅ कि कश्मीरी पंडितों का मामला सुलझे तथा साथ में ही मैं यह भी चाहता हूॅ कि नक्सलवाद प्रभावित क्षेत्रों से निकाले गए आदिवासियों के मामले की भी चिन्ता की जाए। मैं कश्मीर के मामले को अनावश्यक साम्प्रदायिक भावना से विचार करके प्राथमिक स्तर पर रखने के पक्ष में नही हूॅ। कश्मीर के अलगाववादियों का जो उद्देश्य है वह भी स्पष्ट है और बस्तर के नक्सलवादियों का उद्देश्य भी छिपा नही है। कश्मीर के अलगाववादी कश्मीर को पाकिस्तान में मिलाना चाहते है और बस्तर के आंतकवादी बस्तर सरीखा सारे हिन्दुस्तान को बनाना चाहते हैं। इसलिए बुद्धिमानी है कि किसी क्षेत्र की चिन्ता करने के बजाय सभी क्षेत्रों की सन्तुलित चिन्ता की जाए।

(4) पं0 आर्य प्रहलाद गिरी, मुख्य पुजारी, निंगेश्वर मठ, निंगा, आसनसोल, पं0बं0

विचार—आपकी अद्भूत विश्लेषण क्षमता से मैं भी कुछ व्यक्तिगत लाभ उठाने हेतु एक बार समस्या रखा था कि मैं अपने गॉव को किस युक्ति से शराब मुक्त करने में सफल हो सकूॅगा? किन्तु इसका उत्तर आप मुझ पर ही स्वयं सोचने के लिए छोड़ दिए । तब से मैं आपको सिर्फ बाल की खाल उधेडने वाला या बातों को छीलते रहने वाला समझने लगा। चूंकि इसके पहले भारतीय संविधान की समीक्षा नामक आपकी पुस्तक का कायल तो रहा हूॅ ही, ज्ञानतत्व को आज भी अक्षरशः पढ़ ही जाता हूॅ चाहे कितना भी व्यस्त रहूॅ। यह भी एक अद्भुत पाक्षिक है। इसका रुप—रंग और टाइप भी अनाकर्षणीय होता है, किन्तु इसके विचार इतने

बेजोड होते हैं कि एक पंक्ति को भी नजर अंदाज करने पर लगता है कि मैं अपनी मानसिक खुराक की थाली के स्वादिष्ट और पौष्टिक मिठाईयों में कुछ को छोड़ देने की गलती कर रहा हूँ।

निसंदेह आप एक परम परोपकारी बौद्धिक और सच्चे महात्मॉ है, किन्तु जब आप विगत लोकसभा चुनाव के पहले मोदी जी के प्रति अपना जो दृष्टिकोण ज्ञानतत्व में प्रकाशित करते थे वो पूर्णतः सत्य होते हुए भी मुझे आपकी यह मोदी मीमांसा काफी अखरती थी, क्योंकि उससे मोदी की ऑधी में वोटरों की संख्या घटने के बजाय कुछ भी नही बढ़ पाती।
मेरा निश्चित मत है कि मोदी का सत्ता में आना, डूबते भारत का निकटस्थ प्रकाश स्तंभ है। वर्ना इनके स्थान पर आज कोई अन्य होता तो भारत में कोहराम मचा हुआ होता क्योंकि आपके मोहन बाबा पक्के धृतराष्ट्र बन चुके थे। दुर्योधनों के वर्चस्व की ऑधी में जनता कराह रही थी। अतः उस समय आपको सर्वाधिक सुयोग्य देशोद्धारक राजऋषि मोदी को प्रधानमंत्री के लिए बिना मीन–मेष निकाले समर्थन करना था। वैसे आप इनके कोई विरोधी भी न थे, सिर्फ अपनी सत्यशक्ति में मोदी का भी मीन–मेष निकालने से खुद को नहीं रोक पा रहें थे। जैसे आज स्वयं संघ के लोग गोडसे, हिन्दू राष्ट्र, राममंदिर, चार बच्चे, घर वापसी, मैडम टेरेसा आदि की असामयिक बातों को उठा कर मोदी को कश्मीर से दिल्ली तक हराते जा रहे हैं। संघ की ये सारी बातें सत्य हैं, किन्तु इन बातों को बिना उठाए ही मोदी जी यथावसर अपने ढंग से लागू तो करते ही। पूर्व में गुजरात में भी विधान सभा चुनाव में मोदी के गुप्त विरोधी रह चुके संघ के लोगो को मोदी पर भरोसा शायद न होगा या फिर ये दिखलाना चाहते हैं कि मैं ही सच्चा हिन्दू राष्ट्रवादी हूँ, मैंने ही मोदी को सत्तासीन किया है, मैं ही मोदी का पथ प्रर्दशक हूँ। इसीलिए धेर्य रखे बिना असमय में ही ये सत्योद्घाटन करते रहते हैं।

यदि संघ वाले इसी तरह बेलगाम बोलते रहे तो आगामी बिहार और बंगाल में भी दिल्ली चुनाव जैसा ही हाल होगा। मैं नम्रता पूर्वक कहना चाह रहा हूँ कि आपका भी सत्योद्घाटन मुझे लोकसभा चुनाव के पहले खटकता था कि कहीं मोदी जी का ये चुनाव न गडबडा जाए। किन्तु धन्यवाद दें, रामदेव बाबा को कि उनके करोडो भारत स्वाभिमानी इस बार मोदी को प्रधानमंत्री बनाने–बनवाने पर उतारु हो उठे थे।

अब मैं 309 प्रथम मार्च 2015 के अंक में गीता पर लिखे आपके विचारों से असहमति या विरोध प्रकट करता हूँ। मेरी नजर में आचार्य रजनीश के बाद एकमात्र आप ही तार्किक लगते हैं। चूंकि देश दुनिया को जितनी निर्मल और परोपकारी भावना से आप विचार दे रहे हैं, वे नही दे पाए थे, उनका स्वार्थ था शब्द जाल में पाठकों को फंसा कर अपना प्रशंसक बनाना, जबकि आप प्रशंसको से ज्यादा महत्व अपने आलोचकों को ही देते हैं। रजनीश से मैं कोई विशेष तुलना नहीं कर रहा हूँ। हॉ, आप जितने कुशल और सक्षम शब्द विश्लेषक हैं, तार्किक हैं, समीक्षक हैं, उतने गुण इस गीता विश्लेषण में नहीं दिखे।

इसमें तो मुझे महा आश्चर्य और निराशा हुई जब आप लिखते हैं कि आज मैं जो कुछ हूँ उसमें गीता ज्ञान का बहुत बडा प्रभाव है। लगता है कि आप गॉधी जी के प्रति स्वाभाविक भक्तिवश ऐसा असत्य कह रहे हैं। मैं समझता रहा हूँ कि आप जो कुछ भी तार्किक और विश्लेषक शक्ति प्राप्त कर सके हैं तथा सत्य को सत्य बोलने का साहस आपको प्राप्त है, उन सब में क्रांतिकारी पुस्तक सत्यार्थ प्रकाश का ही सर्वाधिक महत्व रहा है। यदि मैं गलत फहमी में हूँ तो स्पष्ट करें। मैं पूर्ण स्वस्थ होकर भी वर्षों पूर्व स्वामी राम देव जी से भी इसीलिए जुडा था कि उन्होंने कहीं इन्टरव्यू में स्वीकार किया था कि वे महर्षि दयानंद से प्रभावित हैं। मेरा मानना है कि महर्षि दयानंद से प्रभावित महापुरुष की तार्किक बुद्धि निर्मल और सटीक होती है। हॉ, श्रीराम शर्मा, आचार्य जैसे भी महापुरुष हैं जो दयानंद से प्रभावित होकर भी अपनी लोकप्रियता

बढाने हेतु गायत्री मंत्र की देवी की मूर्ति बनाकर साकार पूजा को स्वतंत्र रुप से प्रचारित करते रहे। आज साकार पूजा ही हिन्दू धर्म की अनेक समस्याओं का मूल कारण बना हुआ है।

गीता पर आपकी टिप्पणी भी अन्य श्रद्धालु विद्वानों की भॉति ही है। आप मोदी जैसे सर्वाधिक निर्दोष नेता मे तो अवगुण ढूँढ लेते हैं किन्तु गीता में नहीं? हॉ चुनाव यानि जीत के बाद के अंक में मोदी के कुछ प्रशंसक जैसे अब आप भी दिखने लगे हैं।

आपकी नजर में गीता और सत्यार्थ प्रकाश में कौन सर्वाधिक सत्य और कौन अवसरवादी पुस्तक है। चूंकि मैं भी गीता का खास विरोधी पाठक नहीं हूँ किन्तु इसे वेदो से भी अत्युत्तम पुस्तक बताना मुझे उसी तरह असहनीय लगता है जिस तरह राधा को रुक्मणि से भी कृष्ण की ज्यादा करीबी बताना, जबकि श्री कृष्ण के जमाने में राधा का जन्म भी नहीं हुआ था। उसी तरह गीता भी बौद्धों की बाढ़ में बहते जा रहे सनातनियों को बचाने हेतु रची गई एक वैदिक गाईड जैसी पुस्तिका है, जो त्रिपिटिक की धार को कुंद करने के लिए रची गई थी। यदि गीता न होती तो सारे हिन्दू बौद्ध बन गए होते और बौद्धों को मुसलमान बना देना काबुल से कंबोडिया तक मुगलों के लिए एक दम आसान था। बौद्धों की कायरता से ही नालंदा विश्वविद्यालय जल गया। आज जरुरत है, हिन्दू धर्म ग्रन्थों में कब–कब, कहॉ–कहॉ कितनी मिलावटें की गई हैं इसे जन सामान्य को बताने की, वर्ना कल कोई हनुमान चालीसा को भी प्रांतीय ग्रंथ घोषित करा देगा, और वेद तथा छहो शास्त्रों आदि आर्ष ग्रंथों पर पत्रिकाएं निकालने वाले हम आर्यजन का पुरुष बने देखते रह जायेंगे।

समीक्षाः—आपने अपने पत्र में जो कुछ भी लिखा, उससे मैं पूरी तरह सहमत हूँ । मोदी जी के विषय में मेरा जो कुछ मानना था, उसमें अब भी कोई बदलाव नही आया है। यह अवश्य है कि मैं उस समय भी नरेन्द्र मोदी की अपेक्षा, मनमोहन सिंह को अधिक अच्छा प्रधानमंत्री मानता था और अब भी मानता हूँ। मेरे विचार में मनमोहन सिंह लोकतांत्रिक भारत को अधिक प्राथमिकता दे रहें थे और समस्याओं के समाधान करने में अपनी भूमिका शून्य करके उन समस्याओं का लोकतांत्रिक तरीके से समाधान होते हुए देखना चाहते थे। मनमोहन सिंह के कार्यकाल के पहले बडे–बडे भ्रष्टाचार हुए, किन्तु सत्ता के केन्द्रीयकरण के कारण वे उजागर नहीं हो सके। मनमोहन सिंह के कार्यकाल में कमजोर प्रधानमंत्री पाकर नेताओं ने स्वतंत्रता पूर्वक भ्रष्टाचार किया और लोकतांत्रिक प्रक्रिया ने ही वे सारे भ्रष्टाचार उजागर कर दिए। मनमोहन सिंह के कार्यकाल में सबसे अधिक भ्रष्ट नेता जेल चले गए। यहॉ तक कि अनेक मुख्यमंत्री भी उनके कार्यकाल मे जेल गए। न्यायपालिका को अधिक स्वतंत्र और सशक्त होने देने का प्रयोग भी मनमोहन सिंह की ही देन है। मनमोहन सिंह को आपने धृतराष्ट्र लिखकर उनके साथ अन्याय किया है। सच बात यह है कि जिस तरह भरत ने अपने को राम द्वारा नियुक्त मानकर तथा खडाउ रखकर निष्प्रिह भाव से शासन किया था उसी तरह मनमोहन सिंह ने भी स्वयं को जनता द्वारा या संसद द्वारा नियुक्त न मानकर सोनिया गॉधी की खडाउ रखकर पूरी इमानदारी से उनकी हर अच्छी बुरी इच्छा का पालन किया। आपने मनमोहन सिंह को जनता द्वारा नियुक्त प्रधानमंत्री मानने की भूल की है। जबकि सच्चाई आप भी जानते हैं कि जनता ने और संसद ने सोनिया गॉधी को प्रधानमंत्री माना था और सोनिया ने मनमोहन सिहं को रबर स्टांप के रुप में सिर्फ हस्ताक्षर करने का अधिकार दिया था।

नरेन्द्र मोदी जनता द्वारा नियुक्त संसद के माध्यम से प्रधानमंत्री चुनकर आए है। वे लोकतंत्र की अपेक्षा समस्याओं के समाधान को प्राथमिकता दे रहे हैं। यह भी कोई गलत मार्ग नहीं है फिर भी मैं अब भी मानता हूँ कि यदि नीतिश कुमार सरीखा कोई व्यक्ति सामने दिखे जो लोकतंत्र तथा समस्याओं के समाधान को एक साथ लेकर चल सके तो मैं ऐसे व्यक्ति को मोदी से भी अच्छा मानूँगा। किन्तु नीतिश कुमार की जगह यदि कोई और आवे जैसा सरसठ वर्षो तक चला वैसा ही चलना चाहे तो मैं नरेन्द्र मोदी की अन्ध

भक्ति करने तक को तैयार हूॅ। आपने गीता और सत्यार्थ प्रकाश की तुलना की है। वस्तु स्थिति यह है कि मैं गीता का उतना बडा जानकार नही हूॅ जैसा स्वामी दयानंद जी थे या आप जानते हैं। मैं तो यह समझता हूॅ कि गीता ने मेरे चरित्र पर प्रभाव डाला और सत्यार्थ प्रकाश ने मेरा ज्ञान बढाया। अब ज्ञान और चरित्र का अन्तर क्या है यह मैं स्वयं नहीं समझ पा रहा हूॅ कि मैं दोनों में से किसे आगे देखूॅ। मैं जानता हूॅ कि बाबा रामदेव सत्यार्थ प्रकाश की ही उपज है, साथ ही श्री राम शर्मा को भी सत्यार्थ प्रकाश ने ही मार्गदर्शन दिया। किन्तु मैं सत्यार्थ प्रकाश की प्रशंसा करते समय इस सत्य को कैसे छोड दूॅ कि मेरे प्रारम्भिक जीवन में गीता ने बहुत प्रभाव डाला है। मैं गीता में अवगुण नही ढूॅढ पाया हूॅ इससे आपको मेरी नीयत पर संदेह करने की अपेक्षा मेरी क्षमता पर संदेह करना चाहिए था। मैं आपको स्पष्ट कर दूॅ कि मुझे वेद मंत्रों का किसी भी प्रकार से कोई ज्ञान नहीं है। यदि वेदो में कोई ऐसा अमृत है जिसे निकालने की क्षमता मेरे में नही है तो मैं अपनी सीमित शक्ति को गीता, रामायण और सत्यार्थ प्रकाश तक ही क्यों न सीमित कर लूॅ। वेदो के अमृत निकालने का काम अन्य विद्वानों का है जो वह अमृत निकालकर यदि बॉटेगे तो मैं भी उस अमृत में से कुछ प्राप्त करने के लिए उनसे भिक्षा मॉग लूॅगा। किन्तु मैं उस असम्भव अमृत को निकालने में कोई शक्ति नहीं लगाउॅगा। मैं नही जानता कि गीता नहीं होती तो हिन्दुत्व पर क्या प्रभाव पडता किन्तु मैं अपनी क्षमता के अनुसार हिन्दू धर्म ग्रन्थों के विश्लेषण और सत्य– असत्य को अलग–अलग करने के कार्य में न लगाउॅगा न लगूॅगा। मैं जिस कार्य में लगा हूॅ वह सिर्फ इतना ही है कि समाज और राज्य के बीच राज्य ने समाज को गुलाम बना लिया है, वह समाज राज्य की गुलामी से मुक्त कैसे हो? हिन्दू और मुसलमान, गीता और सत्यार्थ प्रकाश अथवा गॉधी और बाल ठाकरे के बीच निर्णय करने का समय तो तब आएगा जब राज्य की कैद से समाज मुक्त हो जाएगा। पंडाल में आग लगी है और उस पंडाल में गीता भी है और सत्यार्थ प्रकाश भी है, हिन्दू भी है और मुसलमान भी तो मैं ऐसी मूर्खता करने के लिए तैयार नहीं हूॅ जैसी स्वतंत्रता के पूर्व कुछ तथाकथित हिन्दूओं, मुसलमानो अथवा अम्बेडकर वादियों ने की थी। मेरा तो मानना है कि आप जो कार्य कर रहे हैं उसमे मेरा पूरा समर्थन और सहयोग रहेगा, किन्तु मेरी सर्वोच्च प्राथमिकता समाज को राज्य की जेल से मुक्त कराने तक सीमित होगी।

(5) अमर सिंह आर्य, सी–12 महेशनगर, जयपुर

विचार–अंक 311। स्वराज्य, केजरीवाल की दिल्ली की सत्ता की सफलता प्रशान्त, यादव, केजरीवाल विवाद, मोदी की सफलता में तानाशाही रवैये का हाथ, सहभागी लोकतंत्र, अव्यवस्था, तानाशाही बिन्दुओं पर आप की गहन व्याख्या से ऐसा प्रतीत हुआ कि जैसे राजनीतिक भटकाव में प्रतियोगिता कराई जा रही है और तानाशाही प्रवृत्ति को सत्ता की सफलता से जोड कर देखा जा रहा है। इसमें विचार का भ्रम छिपा है। सिद्धांत की असफलता और सत्ता की सफलता को परिस्थिति अनुसार केजरीवाल के समयानुसार निर्णय को माना जा रहा है जबकि मूल जीवन में जनता का सत्ता के प्रति रोष मुख्य है। उसमें जनता केजरीवाल को विकल्प के तौर पर आजमाना चाहती है। परन्तु इसका मूल मेरी समझ अनुसार गॉधी, नेहरु के विचारों के अन्तर में छिपा है। गॉधी गॉव को संविधान में स्थान देना चाहते थे जबकि नेहरु–अम्बेडकर इसके विरोधी थे। गॉव को संविधान में जगह न देने के पीछें नेहरु जी गांवों के प्रति पूर्वाग्रह से प्रभावित थे। ग्राम स्वराज्य के बारे में गॉधी जी ने 1945 में पंडित जी को एक पत्र लिखा था जिसके प्रत्युत्तर में नेहरु जी ने 9 अक्टूबर 1945 को गॉधी को पत्र में ग्रामीणों को दकियानूसी, झगडालू, संकुचित प्रवृत्ति वाला कहा, इसकी पुष्टि चौधरी चरण सिंह जी द्वारा दिल्ली में 1958 नेहरु से की मुलाकात से होती है। चौधरी साहब ने इसे अपनी एक पुस्तक ''जातिवादी कौन'' में स्पष्ट किया है। अर्थात् शहरी ग्रामीण के अन्तर को

नेहरु ने प्रारम्भ से बढावा दिया था। वे गॉवों को विकास में बाधा मानते थे इसलिए शहरीकरण को प्रोत्साहन देकर देश को विकसित बनाना चाहते थे। गॉधी जी ग्रामस्वराज्य पर सार्वजनिक बहस कराना चाहते थे, परन्तु नेहरु ने इस मुद्दे को यह कहकर टाल दिया था कि स्वतंत्र भारत की सरकार इस मामले पर बहस करेगी। बाद में गॉधी जी की मृत्यु हो गई, इस विषय पर बहस नही हो सकी और देश बिना बहस के नेहरु की राह पर चल पडा, तब से बड़े उद्योग तथा कृषि आधारित ग्रामीण उद्योग को एक दूसरे के विरोधी के रुप में देखा जाने लगा।

आठ मई 2015 को होटल 'आमेर के लाक्स' जयपुर में तुषार गॉधी ने संस्मरण सुनाते हुए कहा कि किसी ने गॉधी जी से पूछा, क्या आप भी राजनीति करते हैं तो गॉधी ने कहा कि हॉ करता हूॅ क्योंकि मैं राजनीति की सफाई करना चाहता हूॅ। लगता है केजरीवाल कीचड़ में उतर कर राजनीति को साफ करना चाहते थे किन्तु ऐसा लगता हैं कि वे कीचड में फॅसते जा रहे हैं। जहॉ स्वराज्य एवं खेती का प्रश्न है तो बिना गॉव के दोनों का अस्तित्व ही नहीं है। हमारे लिए यह अच्छा होता कि हम कृषि और ग्रामीण समस्याओं के समाधान के लिए जनता सरकार पर दबाव बनाए। मैं समझता हूॅ कि अधिकतर समस्याऍ इन रास्तों से हल हो सकती हैं!

लम्बे समय से लैण्ड बिल पर विवाद चल रहा है और कांग्रेस स्वयं को किसान हितैषी तथा भाजपा को किसान विरोधी ठहराने के प्रयास कर रही है। सही कहूॅ तो अधिकांश सदस्य मामले को समझते ही नहीं है। इसको भी उद्योग और किसान को एक दूसरे के शत्रु रुप में खडे करने के प्रयास हो रहे हैं जो देश हित में कतई नहीं हैं। सभी दल किसान विरोधी हैं यहॉ तक किसान संगठन भी हितैषी की भूमिका में नहीं दिखाई पडते हैं। मैंने सरकारी अफसर रहते हुए तीन मण्डी समितियों हेतु भूमि अधिग्रहित की। मुझे इसका अनुभव है, तथा रिको द्वारा उद्योंगों हेतु आवाप्त भूमि का दूरुपयोग खूब देखा। मेरे कई जानकारों ने अपने पक्ष के पदारुढ अधिकारियों से पत्नी पक्ष के सम्बन्धियों के नाम भूमि आवंटित करा ली और किराए पर दे दी। आज तक उद्योग नही लगे। कई ने उद्योगों के नाम जमीन ली और बेच दी। सडको, सरकारी उद्योग के अलावा किसान भूमि अवाप्ति एकदम अन्याय है। उद्योग किसान से सीधे बजार भाव से जमीन खरीदें तथा उनके बच्चों को नौकरी दे। सरकार का बीच में रहना दलाली करना सरासर किसान के साथ अन्याय है। इस पर विचार समाज करे।

काफी समय से एन जी ओ के कार्य पर उगली उठती रही हैं। कई एन जी ओ देश की कमियों का विदेशों में ढिंढोरा पीट कर वहॉ से धन की मदद मॉगते हैं और कई बार वह धन धर्मान्तरण में इस्तेमाल होता हैं। आज भी क्या हम अपने काम विदेशी सहायता के बिना नहीं कर सकते। विदेशी सहायता का यह खेल बन्द होना चाहिए। सोचिए कोई विदेशी भारत में अपने देश की कमियों का रोना रोकर कभी कुछ मॉगता नही ंतो फिर हम ही क्यों?

अंक 311 में व्यवस्थापक ने संसद की उच्श्रृखंलता पर सामाजिक नियंत्रण कैसे हो पर सुझाव चाहे हैं। संविधान के अनुच्छेद नं0 3 में संसद के कानून बनाने की शक्तियों पर सीमा रेखा बनाने की जरुरत है। आप कहेंगे हम व्यवस्था में मूल परिवर्तन करे। जगह– जगह थेकली लगाने से सत्ता परिवर्तन ही होता है, व्यवस्था नही बदल पाती। परन्तु लोक संसद के अलग से गठन पर भारी टकराव की सम्भावना है। बिना संघर्ष के न लोकसंसद सम्भव है और न अनुच्छेद न0 3 में संसद की शक्तियॉ कम करना। परन्तु दोनों बाते विचार हेतु आगे बढाई जाने में कोई हानि नहीं है। संसद के उच्च्य सदन राज्य सभा के वर्तमान स्वरुप पर भी बात की जाए। राज्य सभा में विशेष विशेषज्ञों को प्राथमिकता मिले बहुमत मिले। हारे हुए लोगों, फिल्म कारों खेल जगत के वर्चस्व को समाप्त करना उचित रहेगा। साथ ही राज्यो की विधान परिषदें महत्व हीन सी है, जनता पर भार कम करने हेतु समाप्त की जाए। ग्राम संभाए, पंचायतों का सशक्त

प्रशिक्षित होना ही पर्याप्त है। विधायिका ही नहीं न्यायपालिका पर भी ताकतवरों के पक्ष में झुकने के आरोप लगते आ रहें हैं। हाल के सलमान, जयललिता के निर्णयों पर कानून विदों में भी सहमति नहीं। न्यायपालिका पर बढ़ते मुकदमों के भार को कम करने का कोई रास्ता नहीं दिख पा रहा है। जिन हाई कोर्ट में लाखों लोगों के जमानत मामले ही पेंडिंग है और ताकतवरों के केस वरीयता को दर किनार कर सुने जा रहे हैं यह विषय विचारणीय है। मैं एक राजनीतिक परिवार से हूँ, यू.पी. में आजादी के प्रारम्भ में परगना जो कुछ गॉवों का समूह होता था, पर न्याय पंचायते थी। जिन्हें स्थानीय मामलों को सुनने के अधिकार थे। ऐसी व्यवस्था पुनर्जीवित की जानी चाहिए और न्याय पंचायतों को न्यायिक अधिकार देने का मामला मंचो से उठाया जाना चाहिए। मेरा दृढ़ मत है कि न्याय सस्ता सुलभ होगा और न्यायालयों पर मुकदमों का भार कम होगा।

अंक 312 में परिवार सम्बन्धी अनेकों प्रश्न वेश–भूषा, चरित्र पर विचार आए। कोई क्या पहने यह तो व्यक्तिगत स्वतंत्रता हो सकती है परन्तु वेश–भुषा ऐसी हो जिससे अंगों का प्रदर्शन न झलके। आप नग्नता की वकालत करें तो इससे सहमत नही हुआ जा सकता है। आप शिथिल इन्द्रिय बूढों के उदाहरण आम देते हैं। यद्यपि चरित्र का उम्र से कोई सम्बन्ध नहीं परन्तु एक विचारवान वृद्ध के पास अनुभव होता है जिसे वह समाज में शेयर कर सकता है। कुछ व्यक्ति ऐसे होते है चरित्र ही जिनकी पूॅजी होती है, और कई ऐसे भी होते हैं कि चोर चोरी से जाए पर हेराफेरी नहीं जाए, कहावत चरित्रतार्थ करते हैं। आप मुझ पर भी पहले भद्दी टिप्पणी कर चुके हैं परन्तु क्या आप सबको ही वासना के भाव से चरित्र हीन मानते हैं? आप स्वराज्य का नम्बरदार होने का दम्म भरते हैं और आपके पास अपनी बात कहने के साधन व पत्रिका है और सभा में भी मंच पर आपका एकाधिकार होता है तथा आप किसी को अपनी बात रखने दें या न रखने दें ये सर्वाधिकार सुरक्षित होता है। एक कहावत आप पर घटित होती है" पंचों की बात सरमाथे परन्तु परनाला वहीं पडेगा।

उत्तरः–दुनिया के किसी भी देश में यदि लोकतंत्र लोक स्वराज्य की दिशा मे न जाकर सत्ता तक सीमित रह जाता है उसे विकृत लोकतंत्र कहते हैं। ऐसा लोकतंत्र सिर्फ शासन प्रणाली तक सीमित हो जाता है, परिवार व्यवस्था की जीवन पद्धति से दूर ही रहता है। ऐसे विकृत लोकतंत्र में लोकहित को छोडकर लोकप्रिय कदम उठाने की प्रतिस्पर्धा होती है। ऐसा विकृत लोकतंत्र व्यक्ति के न्याय की चिन्ता छोडकर संगठनों की संतुष्टि को प्राथमिकता देता है। ऐसे विकृत लोकतंत्र में सामान्यतया समस्याएॅ बढती रहती हैं तथा सत्ता लोकप्रियता को बनाए रखने के दस प्रकार के नाटक करती रहती है। ऐसी स्थिति में जनता के मन में ऐसे प्रदूषित लोकतंत्र की जगह तानाशाही, सैनिक शासन या राजतंत्र की भूख जगती है। भारत सहित दक्षिण एशिया के सभी देश ऐसे लोकतंत्र से परेशान हैं। वर्तमान केन्द्रित सत्ता का विकल्प इस भूख का परिणाम है। यदि वर्तमान सरकार ने भी लोक स्वराज्य की दिशा नहीं पकडी तो जनता के मन में पुनः प्रदूषित लोकतंत्र की भूख जग सकती है। क्या होगा यह अनिश्चित है। गॉधी और नेहरु के सम्बन्ध में आपकी टिप्पणी से मैं पूरी तरह सहमत हूॅ। केजरीवाल के सम्बन्ध में भी मैं कुछ अलग नहीं कह सकता। किसानों की भूमि लेकर उनका दुरुपयोग पिछली सभी सरकारों में प्रत्यक्ष देखा गया है। वर्तमान मोदी सरकार में वैसे दुरुपयोग की सम्भावना नहीं है। फिर भी मैं आपसे सहमत हूॅ कि उद्योग किसानों से निःशर्त जमीन खरीदें तथा उद्योगों के लिए सरकार कोई अधिग्रहण न करे। एन. जी. ओ. के सम्बन्ध में भी सहमति है।

लोक संसद पर सरकार से भारी टकराव सम्भव है, किन्तु हम वर्तमान व्यवस्था में सुधार को व्यवस्था परिवर्तन नहीं मानते। फिर भी धारा तिहत्तर में संशोधन हेतु कोई संगठन पहल करता है तो हम उसका समर्थन सहयोग करेंगे किन्तु हम अपने प्रयास में ऐसा कोई प्रयास शामिल नहीं करेंगे। राज्य सभा

या विधान परिषद पर मेरी कोई टिप्पणी या सक्रियता नहीं है, क्योंकि जब तक संविधान संशोधन के वर्तमान संसद के असीम अधिकारों में कटौती नहीं होती है तब तक मैं कोई और प्रयास नहीं कर सकता।

न्यायालय ओवर लोडेड हैं यह भी सत्य है और पुलिस भी ओवर लोडेड है यह भी सत्य है। ये दोनों ओवर लोडेड हैं नहीं, बल्कि जानबूझकर किए गए हैं। न्यायालयों में कुल मिलाकर दो प्रतिशत के आस–पास ही आपराधिक प्रकरण लंबित हैं। आपराधिक छवि के राजनेता कभी नहीं चाहते कि आपराधिक मुकदमों का त्वरित फैसला हो। इसलिए ऐसे आपराधिक छवि के लोग संसद में जाकर जुआ, शराब, महिला, आदिवासी, हरिजन उत्पीडन, इसी ऐक्ट जैसे अनावश्यक कानून बनाकर पुलिस और न्यायालय को ओवर लोडेड करते रहते हैं। कुछ सामाजिक कार्यकर्ता भी सरकार को दहेज, तम्बाकू, वैश्यावृत्ति रोकने की मॉग करके उन आपराधिक छवि के नेताओं की सहायता करते रहते हैं, जो काम समाज का है वह काम हम स्वयं न करके सरकार से कराने की भूल करते रहते हैं। बालक–बालिका का बिगडता अनुपात समाज का काम है सरकार का काम नहीं, किन्तु असफल समाज सेवक यह काम भी सरकार से कराने की मॉग करते रहते है। परिणाम स्वरुप न्यायालय और पुलिस ओवर लोडेड है और अपराध बढ़ते जा रहे हैं।

जिस तरह किसी व्यक्ति को वेश–भूषा पर प्रतिबन्ध का विचार देने की छूट है उसी तरह मैं सोचता हूॅ कि विपरीत लिंग को आकर्षित करने वाली वेश– भूषा को भी कानून से नहीं रोका जा सकता है। किसी को धन की भूख है तो किसी को सेक्स की। यदि दोनों किसी तरह मिलकर अपनी भूख मिटाते हैं तो हमें उसके बीच में नहीं पडना चाहिए। सेक्स के सम्बन्ध में भी यदि कानून से बाधा पहुॅचाई गई तो बलात्कार और हत्याओं का बढना नहीं रुक सकता। मैं स्वयं एक शिथिल इन्द्रिय वृद्ध व्यक्ति हूॅ किन्तु मैं समझता हूॅ कि युवावस्था और मेरी स्थिति में जमीन–आसमान का फर्क है। मैं बलात्कार के अतिरिक्त किसी भी मामले में कानून के हस्तक्षेप के बिल्कूल विरुद्ध हूॅ। मुझे स्वयं पर इतना विश्वास है कि मैं ऐसी सामाजिक बुराईयों को कानून के बिना भी रोकने के लिए प्रयत्नशील हूॅ। मैं अपनी अक्षमता पर पर्दा डालने के उद्‌देश्य से इसके लिए सरकारी हस्तक्षेप आमंत्रित नहीं कर सकता।

मैं अपनी सभा में किसी अन्य को बिना अनुमति नहीं बोलने देता यह सच है। साथ ही मैं किसी अन्य की सभा में बिना अनुमति बोलने की इच्छा भी व्यक्त नहीं करता। मैं अपनी इस बुरी आदत को छोड़ नहीं पाता। अच्छा हो कि आप मेरी इस कमजोरी के लिए क्षमा करेंगे। जो आदत बचपन से बनी हुई है, वह नही छूटती। इसीलिए तो सारा काम आप सबको सौंपकर मैने स्वयं को ज्ञान तत्व तक सीमित कर लिया है।

मुझे याद नहीं कि किसी सभा में मैंने आपके विषय में कोई ऐसी टिप्पणी की हो। परन्तु ऐसा कभी हुआ हो तो बताने पर मैं क्षमा मॉग लूॅगा। इतना अवश्य है कि जब बूढे लोग आज के नवयुवको को एक सीमा से अधिक प्रवचन उपदेश देते हैं तो वृद्ध भाइयों को मैं सलाह देता हूॅ कि प्राकृतिक भूख को आधार बनाकर स्वयं को चरित्रवान प्रमाणित करने की आदत छोडनी चाहिए। मेरा अपना अनुभव तो यही है। अन्य लोगों का क्या अनुभव है वे जाने। सहमत सेक्स प्रत्येक व्यक्ति का मौलिक अधिकार है। यदि कोई सेक्स समाज द्वारा अस्वीकृत भी हो तो उसे सिर्फ अनुशासित ही किया जा सकता है, शासित नहीं और हमें इस स्थिति से बचना चाहिए।

(6) जगदीश गॉधी, सीटी मोन्टेसरी स्कूल, लखनऊ, उ.प्र.

(1) 21 जून' अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस' के रुप में घोषितः–

27 सितम्बर 2014 को प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने संयुक्त राष्ट्र संघ महासभा में प्रस्ताव पेश किया था कि सयुक्त राष्ट्र को अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस की शुरुआत करनी चाहिए। संयुक्त राष्ट्र महासभा में अपने पहले भाषण में मोदी ने कहा था कि ''भारत के लिए प्रकृति का सम्मान अध्यात्म का अनिवार्य हिस्सा है। भारतीय

प्रकृति को पवित्र मानते है। "उन्होंने कहा था कि "योग हमारी प्राचीन परम्परा का अमूल्य उपहार है। यू. एन. में प्रस्ताव रखते वक्त मोदी ने योग की अहमियत बताते हुए कहा था, "योग मन और शरीर को, विचार और काम को, बाधा और सिद्धि को ठोस आकार देता है। यह व्यक्ति और प्रकृति के बीच तालमेल बनाता है। यह स्वास्थ को अखण्ड स्वरुप देता है। इसमें केवल व्यायाम नहीं हैं, बल्कि यह प्रकृति और मनुष्य के बीच की कडी है। यह जलवायु परिवर्तन से लडने में हमारी मद्द करता है। " संयुक्त राष्ट्र महासभा ने 21 जून 2014 को अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस मानने की मंजूरी प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के प्रस्ताव के मात्र तीन महीने के अन्दर दे दी। इसी के साथ भारत की सेहत से भरपूर प्राचीन विद्या योग को वैश्विक मान्यता मिल गई थी। भारत में वैदिक काल से मौजूद योग विद्या एक जीवन शैली है जिसे प्रधानमंत्री मोदी ने नया मुकाम दिलवाया।

यह प्रस्ताव भारत में 177 सदस्य देशों ने महासभा में रखा। जो एक रिकार्ड है। महासभा ने प्रस्ताव में यह भी कहा कि योग स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है। इससे विश्व शांति और विकास की वृद्धि हो सकती है, योग मनुष्य को तनाव से राहत दिलाता है।

दूसरी ओर भारत में एक प्रस्ताव पर गम्भीर चर्चा चल रही है कि स्कूलों में यौन शिक्षा की पढाई अनिवार्य कर दी जाए। विदेशों में जहॉ–जहॉ भी यौन शिक्षा को अनिवार्य किया गया है वहॉ–वहॉ बुरे परिणाम स्पष्ट दिख रहें है। यदि कोई बात अनिवार्य करनी ही है तो आध्यात्म को अनिवार्य क्यों न कर दिया जाए। इस संबंध में आपके विचार क्या है?

उत्तरः— योग शब्द संज्ञा न होकर तीन विचारों का मिश्रण है–(1) मानसिक शुद्धता (2) शारीरिक शुद्धता (3) आध्यात्मिक विकास। इन तीनों की प्रगति ही योग कहलाता है। योग का अर्थ है जोड। इन तीनों का जोड योग होता है। इन तीनों की भी अलग–अलग प्राथमिकताऍ है। मानसिक शुद्धि को योग का पहला चरण माना गया है। दूसरे चरण में शारीरिक शुद्धि और अंतिम चरण में आध्यात्मिक विकास को जोडा जाता है। योग की भारतीय प्रणाली में बिना मानसिक शुद्धि की शुरुआत के दूसरे चरण को शुरु करना वर्जित है। तीसरा चरण तो ऊपर के दोनों चरणों के बिना शुरु हो ही नही सकता। यदि योग के प्रथम चरण को छोडकर दूसरा चरण शुरु होता है तो प्राचीन समय में इस कार्य को राक्षशी विकास माना जाता था। प्रथम चरण में योग के दो अंग शामिल होते हैं–(1) यम (2) नियम। यम के भी पॉच खण्ड होते है–(1) अहिंसा (2) सत्य (3) अस्तेय (4) ब्रम्हचर्य (5) इन्द्रिय निग्रह। इसी तरह नियम के भी पॉच खण्ड होते है–(1) शौच (2) सन्तोष (3) तप (4) स्वाध्याय (5) ईश्वर प्रणिधान। पहले पॉच यमों को शुरु किए बिना नियमों के पालन की शुरुआत भी योग में वर्जित है। वर्तमान समय में योग के यम और नियम का पालन कठिन से कठिन होता चला गया और इसलिए ही योग व्यक्ति के दैनिक जीवन से किनारे होता चला गया। जैसे–जैसे योग किनारे होता गया वैसे–वैसे समाज का चरित्र पतन भी होता गया।

बाबा रामदेव ने सबसे पहले इस दुविधा का लाभ उठाया और उन्होंने यम नियम पर जोर न देकर आसन, प्रणायम, प्रत्याहार तक योग को सीमित कर दिया। वास्तव में योग के ये तीनों अंग व्यायाम के अंग माने जाते है। परन्तु बाबा ने व्यायाम को ही योग का नाम देकर उसका लाभ उठाया । यह सच बात है कि जब से बाबा रामदेव ने योग को आसन, प्राणायम, प्रत्याहार तक सीमित करके सहज किया है तब से समाज को इसका प्रत्यक्ष लाभ दिखने लगा है। यह निर्णय करना कठिन है कि योग के आठ अंगों में से पॉच को किनारे करके तीन पर जोर देना अच्छा हुआ या बुरा? विशेषकर यम और नियम को छोडना अच्छा नहीं हुआ, परन्तु यह भी विचारणीय है कि यम नियम का पालन हो ही नहीं रहा है तो आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार के द्वारा शरीर शुद्धि से भी वंचित क्यों रहा जाए? मैं स्वयं निर्णय नहीं कर पा रहा हूँ कि योग के प्राचीन स्वरुप पर स्थिर रहना उचित था अथवा संशोधित स्वरुप को स्वीकार करना। इतना अवश्य सच है

कि बाबा रामदेव ने इस एक संशोधित प्रक्रिया को पालन करके आज सारी दुनिया में ख्याति प्राप्त कर ली है। यह अवश्य विचारणीय है कि यह ख्याति योग का नुकसान करके की गई या उचित संशोधन करके।

आपने यौन शिक्षा के विरुद्ध विचार व्यक्त किए हैं। इस सम्बन्ध में मैं स्वयं स्पष्ट नहीं हूँ कि क्या होना चाहिए। यौन शिक्षा अब तक अनिवार्य नहीं है। फिर भी विभिन्न कारणों से बच्चों में इसकी कुछ न कुछ जानकारी बढती जा रही है। यह जानकारी ठीक दिशा में है या गलत दिशा में यह अलग विषय है। जिस तरह योग में यम नियम के शामिल रहते हुए भी समाज का चरित्र पतन हो ही रहा था तो फिर यम नियम को अनिवार्य बनाकर रखने की अपेक्षा स्वैच्छिक कर देना अधिक अच्छा माना गया। उसी तरह यौन शिक्षा भी जब आम हो ही रही है तो क्यों न उसे सिद्धांत रुप में शामिल कर लिया जाए। स्पष्ट है कि मैं इन दोनों मुद्‌दों पर अपना निर्णायक अभिमत देने की स्थिति में नही हूँ। वैसे मैंने स्वंय योग सीखने की शुरुआत यम नियम से की, और यौन शिक्षा बचपन से अब तक कभी प्राप्त नहीं की, किन्तु मुझे इन दिनों स्थितियों से काफी लाभ मिला।

आपने बच्चों को आध्यात्म शिक्षा अनिवार्य करने की बात कहीं है। मैं अब तक नही समझ पाया हूँ कि आपका आशय क्या है। यम नियम आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार के बाद धारणा ध्यान समाधि का नम्बर आता है। यह आध्यात्मिक ज्ञान स्वैच्छिक है, कठिन है, लाभदायक है। किन्तु मैं यह उचित नहीं समझता कि योग के मानसिक, शारीरिक उन्नति का भरपूर ज्ञान न होते हुए भी आध्यात्मिक शिक्षा को अनिवार्य बना दिया जाए। मेरे विचार में यह कदम समाज में विवाद भी पैदा करेगा और आध्यात्म के विचार को नुकसान भी करेगा। इतना अवश्य है कि उच्चस्तरीय शिक्षा में आध्यात्म को एक स्वैच्छिक विषय के रुप में शामिल किया जा सकता है। मैं आध्यात्म शिक्षा को अनिवार्य करने के पक्ष में नही हूँ।

(7) लायकराम, सोलन, हिमाचल प्रदेश

आपकी ज्ञानतत्व पत्रिका मुझे निरन्तर मिल रही है। इस पत्रिका में आपके सामयिक लेख मुझे पसंद आते हैं, आपके विचार बहुत ही अच्छे हैं चाहे वे राजनीति पर हों या सामाजिक घटनाक्रमों पर हों। मुनि जी आज के दौर में भारत की दशा बहुत पीडा दायक है। मनुष्य का सामाजिक राजनैतिक स्तर बिल्कुल गिर चुका है। भारत का कोई भी राजनेता विश्वास के काबिल नहीं हैं। मुझे तो आज के मीडिया पर भी कतई विश्वास नहीं है, खास कर इलैक्ट्रानिक मीडिया पर। इन दोनों ने जो भी प्रोग्राम बनाए है सब हिन्दू विरोधी व भारतीय संस्कार के विरोधी हैं। इसके लिए आम आदमी को अति जागरुक करना आवश्यक है। कृपया अपनी राय आप भी बताए तथा हमसे भी जो सहयोग बन पडेगा करेंगे।

उत्तरः—आपने भारत में समाज की गिरती हुई स्थिति पर चिन्ता व्यक्त की है। यह सच है परन्तु भारतीय समाज की गिरती हुई स्थिति चिन्ता का विषय न होकर, चिन्तन का विषय होना चाहिए, सिर्फ समाधान का मार्ग खोजना है। सच बात यह है कि वर्तमान गिरती हुई सामाजिक स्थिति हम सब लोगों के लिए कुछ कर दिखाने का अच्छा अवसर है। कोई किसी बीमारी का इस्पेस्लिस्ट सिर्फ बिमारी की चिन्ता करे तो वह उसकी नाकामी है। बीमारी का बढना उसे कार्य करने का अवसर प्रदान करती है। यदि बीमारी ही कम होती तो न अस्पताल की जरुरत थी न डॉक्टर की। समस्याओं का रोना रोने की अपेक्षा उसे चुनौती मानकर समाधान में लग जाना चाहिए। हम सब यथा शक्ति समाधान में लगे हैं। आप भी यथा शक्ति समाधान में सक्रिय होने की सहमति स्वीकृति की सूचना दीजिए। आश्वस्त रहिए कि यदि हम आप सरीखे कुछ लोग संगठित होकर योजना पूर्वक समाधान में लगेंगे तो समाधान अवश्य होगा।

नेहरु को नकारने के निहितार्थ

आजादी की लडाई पर सुनियोजित हमला किया जा रहा है। नेहरु इस मामले का मुख्य निशाना है। नेहरु का नाम आते ही नेहरु परिवार की बात शुरु हो जाती है। देश की हर समस्या का नाम नेहरु के खाते दर्ज किया जाता है। नेहरु को एक सत्ता लोलुप की तरह पेश किया जाता है, जिन्होंने गॉधी को किनारे लगा कर अंग्रेजो से सत्ता हथिया ली या फिर गॉधी की कृपा से वे गॉधी के उत्तराधिकारी बने। अगर नेहरु इस देश के पहले प्रधानमंत्री न होते तो देश की सूरत अलग होती, क्योंकि वे निर्णय लेने में अक्षम थे। वे तो पटेल थे जिनकी लोहे जैसी इच्छाशक्ति ने इस देश को बचा लिया, या फिर इस देश में नेहरु की इकलौती विरासत वंशवाद की नीव रखना था। यह और इस तरह के जाने कितने आरोप एक सॉस में नेहरु पर मढ़ दिए जाते हैं। दरअसल नेहरु कौन थे यह बात आम आदमी की याद्दाश्त से गायब हो चुकी है। नई पीढी जिसका सबसे बडा स्कूल इंटरनेट है, यू–ट्यूब है, वे नेहरु को सिर्फ इतना ही जानते है कि नेहरू तथाकथित रुप से आला दर्जे के शौकीन आदमी थे।

नेहरु के दुश्मन एक नहीं, अनेक है। सांप्रदायिक एजेंडे में वे गॉधी की तरह एक रोडा है। साम्राज्यवादियों के लिए आजादी की पूरी लडाई एक झूठ और दिखावा थी, जो कि ब्रिटिश राज की भलाई देखने के बजाय उसकी जड़ खोदने का काम करती थी। सबाल्टर्न इतिहासकारों के हिसाब से नेहरु उस जमात के नेता थे जो अभिजात थी, जिसका नीचे से यानी जनता के भले से कोई लेना देना नही था। रुढ मार्क्सवादी इतिहास लेखन नेहरु को उस बुर्जुवा नेतृत्व का प्रतिनिधि मानता रहा जिसने समाजवाद के प्रति प्रतिबद्धता के बावजूद क्रांति की ऐतिहासिक सम्भावनाओं को कमजोर किया। गॉधी की हत्या के बाद गॉधीवादियों ने नेहरु से यह कह कर पल्ला झाड लिया कि वे भी गॉधी के अंतिम दिनों की तरह सत्ता से दूर रहेंगे। वे उस गॉधी को भूल गए जो अपने ह्रदय के हर कोने से खांटी राजनीतिज्ञ थे। समाजवादियों की जमात ने कभी नेहरु के नेतृत्व में ही समाजवाद का ककहरा सीखा था। आजादी के बाद वह समाजवादी नेहरु की जडे खोदने पर आमादा हो गए। गॉधी की पहले ही 1948 में हत्या हो चुकी थी। बाकी बचे मौलाना आजाद जो नेहरु के मुश्किल दिनों के साथी थे।

यानी आजादी के पहले और आजादी के बाद दो अलग दौर थे। पहले दौर में गॉधी के व्यापक नेतृत्व में एक भरी पूरी कांग्रेस थी, जिसमें नेहरु, गॉधी के बाद बिना शक नंबर दो थे। लेकिन आजादी के बाद और गॉधी की हत्या के बाद सिर्फ नेहरु थे। आजादी और विभाजन के द्वैध को भुगत कर निकला देश एक नाजुक दौर से गुजर रहा था। दो सौ सालों के औपनिवेशिक शोषण ने देश को अंदर तक खोखला कर दिया था। इस एक तथ्य से ही हालत का अंदाजा लगाया जा सकता है–1947 में भारत में औसत आयु मात्र बत्तीस वर्ष थी।

ऐसे कठिन दौर में नेहरु ने मोर्चा संभाला। उन्होंने दिन रात काम किया। अपनी जिंदगी का बडा हिस्सा सिर्फ चार चार घंटे सोकर बिताया। जिन्हें नेहरु की मेहनत का अंदाजा लगाना हो वे गजानन माधव मुक्तिबोध का निबंध 'दून घाटी में नेहरु' पढ लें। किसी को आजादी के पहले के नेहरु से एतराज नही है। सबकी दिक्कत आजादी के बाद के नेहरु से है। इसलिए यहॉ बात सिर्फ इसी नेहरु की होनी है। उस नेहरु की, जिस पर आजादी की लडाई की समूची विरासत को आजाद भारत में अकेले आगे बढाना था। जिसके हिस्से' सत्ता' का 'अमृत' आया था औपनिवेशिक शोषण और साम्प्रदायिकता से टूटे बिखरे मुल्क में विष भी इसी नेहरु के हिस्से आया।

सबसे पहली बात रियासतों के एकीकरण की। इस काम में सरदार पटेल और वीपी मेनन की भूमिका किसी से छिपी नही है। लेकिन भारत का एकीकरण आजादी की लडाई का मूल विचार था। जिस देश को पिछले सौं सालों में जोड़ा बटोरा गया था, उसे सैंकडो छोटी–बडी इकाईयों में टूटने नही देना

था। यह काम आजाद भारत की सरकार के जिम्मे आया, जिसे पटेल ने गृहमंत्री होने के नाते बखूबी अंजाम दिया। लेकिन भारत को सैकडों हिस्सों में तोडने वाला मसौदा ब्रिटेन भेजने के पहले माउंटबेटन ने नेहरु को दिखाया। माउंटबेटन के हिसाब से ब्रिटेन को क्राउन की सर्वोच्चता वापस ले लेनी चाहिए। यानी जितने भी राज्यों को समय–समय पर ब्रिटिश क्राउन की सर्वोच्चता स्वीकारनी पडी थी, इस व्यवस्था से सब स्वतंत्र हो जाते। नेहरु यह मसौदा देखने के बाद पूरी रात सो नही सके। उन्होंने माउंटबेटन के नाम एक सख्त चिट्ठी लिखी। तडके वे उनसे मिलने पहुॅच गए। नेहरु की दृढ़ इच्छाशक्ति के आगे मजबूरन माउंटबेटन को नया मसौदा बनाना पडा। जिसे तीन जून के नाम से जाना जाता है। जिसमें भारत और पाकिस्तान दो राज्य इकाइयों की व्यवस्था दी गई। ध्यान रहे पटेल जिस सरकार में गृहमंत्री थे, नेहरु उसके प्रधानमंत्री थे। इस तरह यह निश्चित रुप से पटेल का नही, पटेल और नेहरु का मिलाजुला काम था।

दूसरी महत्वपूर्ण बात भारत को धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र बनाने की चुनौती थी। देश सांप्रदायिक वहशीपन के सबसे बुरे दौर से गुजर चुका था। लोगों ने गॉधी के जिंदा रहते उनकी बात अनसुनी कर दी थी। जिन्ना ने अपना दार उल इस्लाम बना लिया था। मुसलमानों का अपना मुल्क पाकिस्तान वजूद में आ गया था। भीषण रक्तपात विस्थापन के साथ हिन्दू और सिख शरणार्थियों के जगह–जगह पहुॅचने के साथ ही हिन्दू सांप्रदायिक दबाव बहुत जर्बदस्त हो गया था। हिन्दुस्तान का पहला आम चुनाव सामने था। यह ऐसा चुनाव था जो सीधे–सीधे धर्मनिरपेक्षता बनाम साम्प्रदायिकता के मुद्दे पर लडा जा रहा था। नेहरु ने जन भावनाओं की मुॅहदेखी नही की। उन्होंने वह कहा जो बहुतों के लिए अलोकप्रिय था। उनमें अलोकप्रिय होने का साहस था। उन्होंने धर्मनिरपेक्षता के हक में आवाज बुलंद की और जनता को अंधेरे समय में रोशनी दिखाई। जनता ने अपने नेता को खुद से ज्यादा समझदार माना। इस चुनाव में नेहरु ने तकरीबन पूरा देश नाप लिया। तकरीबन चालीस हजार किलोमीटर का सफर तय किया। हर दस में एक भारतीय को सीधा सम्बोधित किया। यह चुनाव एक तरह से धर्मनिरपेक्षता के पक्ष में जनमत संग्रह सिद्ध हुआ। नेहरु पर एक और बडा जिम्मा था। आजादी की लडाई के दौरान बोए गए लोकतांत्रिक पौधे की जडे मजबूत करने का। नेहरु की लोकतंत्र के प्रति निष्ठा की एक रोचक कहानी है। नेहरु हर तरफ अपनी जय–जय कार सुन कर उब चुके थे। उनको लगता था कि बिना मजबूत विपक्ष के लोकतंत्र का कोई मतलब नहीं।

नवंबर 1957 में नेहरु ने माडर्न टाइम्स में अपने ही खिलाफ एक जर्बदस्त लेख लिखा। चाणक्य के नाम से। द प्रेसिडेंट नाम के इस लेख में उन्होंने पाठको को नेहरु के तानाशाही रवैये के खिलाफ चेताया। उन्होंने कहा कि नेहरु को इतना मजबूत न होने दो कि वे सीजर हो जाए।

मशहूर कार्टूनिस्ट शंकर अपने कार्टूनों में नेहरु की खिल्ली नहीं उडाते थे। नेहरु ने उनसे अपील की कि उन्हें बख्शा न जाए । फिर शंकर ने नेहरु पर जो कार्टून बनाए उनका संग्रह इसी नाम से प्रकाशित हुआ–डोंट स्पेयर मी शंकर। गॉधी जी की हत्या के बाद राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ पर लंबे समय तक प्रतिबंध को नेहरु ने ठीक नहीं माना। उनका मानना था कि आजाद भारत में इन तरीको का प्रयोग जितना कम किया जाए, उतना अच्छा है। नेहरु को इस बात की बडी फिक्र रहती थी कि लोहिया जीत कर संसद में जरुर पहुचें, जो हर मौके पर नेहरु पर जबरदस्त हमला बोलते थे।

उनकी आर्थिक योजना, जिसे मिश्रित अर्थव्यवस्था कहते है, ने देश को एक मजबूत आधार दिया। जिस वक्त भारत आजाद हुआ, उसे नब्बे प्रतिशत मशीनरी बाहर से आयात करनी होती थी। जर्मनी को छोड कर हर जगह से तकनीक का आयात किया गया। महालनोविस योजना का मुख्य उद्देश्य भारी उद्योगों को बढावा देना था। ठहरी हुई खेती के साथ खाद्यान्न आत्मनिर्भरता हासिल करना एक बडा सवाल था। नेहरु ने लोकतांत्रिक दायरों मे रह कर भूमि सुधार किए।

गरीबों को ऊपर उठाने के लिए नेहरु और उनके योजनाकारों ने सामुदायिक व्यवस्था का सहारा लिया। नेहरु ने गॉवों में ग्राम सेवकों की पूरी फौज भेज दी। नेहरु उद्योग और कृषि में कोई फर्क नही करते थे। उनके मुताबिक दोनों एक दूसरे से जुडी हुई चीजें थी। उनको विकास का महत्व पता था। वे मानते थे कि गरीबी का बंटवारा नही किया जा सकता, सबमें बॉटने के लिए उत्पादन जरुरी है। लेकिन उसके लिए वे खेती से समझौता नही करते थे। उन्होंनें देश में हरित क्रांति की परिस्थितियॉ तैयार की। देश के पन्द्रह जिलों में एक पाइलट प्रोजेक्ट शुरु किया गया। उनकी मृत्यु के बाद शास्त्रीजी ने हरित क्रांति को साकार कर दिया। डेनियल थार्नर कहते है कि आजादी के बाद जितना काम पहले इक्कीस सालों में किया गया, उतना दो सौ साल में किए गए काम के बराबर है। दुनिया के लगभग सारे अर्थशास्त्री जिन्होंने नेहरु की अर्थव्यवस्था का अध्ययन किया, नेहरु की रणनीति को सर्वश्रेष्ठ मानते हैं। नेहरु के विजन में गरीब, लोकतंत्र की कसौटी था। उन्होंने तय किया कि गरीबों के हित परिदृश्य से बाहर नही फेंके जा सकते। उन्होंने गरीबों के प्रति पक्षधरता की वह बुनियादी सोच पैदा की कि उदारीकरण और भूमंडलीकरण के दबाव के बावजूद गरीब किसान मजदूर अब भी बहस का सामान्य मुद्दा बने हुए हैं। नेहरु मानते थे कि लोकतंत्र समाजवाद के बिना अधूरा है और समाजवाद लोकतंत्र के बिना।

बात नेहरु के महिमामंडन की नहीं है। नेहरु की विफलाताऍ भी गिनाई जा सकती है। लेकिन हर नेता अपने समय के संदर्भ में निर्णय लेता है, नीति बनाता है। जो कमजोरियॉ आज हमें दिखाई दे रही हैं, वे नेहरु को नहीं दिख रही थी। क्योंकि नेहरु अपने युग में बैठ कर दुनिया देख रहे थें। उस पर से तमाम भयानक चुनौतियों के बीच।

हमारे यहॉ एक बडा दंगा, एक बडी आपदा, सब कुछ उथल–पुथल कर देती हैं। नेहरु ऐसे चक्रव्युह में अभिमनयु की तरफ लड रहे थे, जहॉ विफलता ही नियति थी। एक बार गोपाल कृष्ण गोखले ने कहा था कि हमने अपनी विफलताओं से ही सही, देश की सेवा तो की।

मोहित सेन ने लिखा है कि तिब्बत सीमा विवाद के वक्त चीन ने नेहरु का कद छोटा करने के लिए उनका चरित्र हनन करना शुरु किया था। चीनी नेतृत्व का मानना था कि नेहरु से टकराने के लिए नेहरु का कद घटाना जरुरी है। यही बात सांप्रदायिक दलों पर लागू होती है। क्योंकि नेहरु उनके लिए खतरनाक है।

उत्तर–इस लेख मे चार लोगो पर विचार मंथन किया गया है।

1 गॉधी 2 नेहरू 3 पटेल 4 अम्बेडकर

कुछ विशेष व्यक्तियों को छोडकर सामान्यतया न कोई व्यक्ति पूरी तरह अच्छा होता है न पूरी तरह गलत। आमतौर पर लोग अच्छे व्यक्तियों की तुलना मे बुरे होते है और बुरे व्यक्तियों की तुलना मे अच्छे। यदि हम पंडित नेहरू और पटेल की तुलना गॉधी से करे तो ये दोनो गॉधी की तुलना मे बौने दिखेंगे या बुरे दिखेंगे, किन्तु यदि हम नेहरू और पटेल की तुलना भीम राव अंबेडकर से करे तो ये दोनो अम्बेडकर की तुलना मे बहुत अच्छे दिखेंगे। गॉधी की नीयत और कार्य प्रणाली बिल्कुल ठीक थी और अम्बेडकर की नीयत और कार्य प्रणाली बिल्कुल गलत। यही कारण है कि नेहरू और पटेल किसी को अच्छे दिखते है और किसी को बुरे।

आपने पंडित नेहरू की प्रशंसा मे जो कुछ लिखा है वह सत्य है। किन्तु इस सत्य के होते हुए भी कुछ और भी सत्य है जो आपने छुपा लिया है। पंडित नेहरू और अंबेडकर ने मिलकर गॉधी के वर्ग समन्वय के बिल्कुल विपरीत जाकर वर्ग निर्माण, वर्ग विद्वेष, वर्ग संघर्ष के विषाणु बीज बोए, जो आज काटे बनकर भारतीय एकता को चुभ रहे है । गॉधी ने समाज सशक्तिकरण का नारा दिया था।

लेकिन नेहरू ने उसे बदलकर राष्ट्र सशक्तिकरण अर्थात राज्य सशक्तिकरण का नारा दे दिया। गॉधी समाजवाद का अर्थ राजनैतिक समानता के साथ जोडकर देखते थे तो पंडित नेहरू और अम्बेडकर ने समाजवाद का अर्थ आर्थिक और सामाजिक समानता के साथ जोड दिया और राजनैतिक समानता को पूरी तरह छोड दिया। आज स्थिति यहां तक है कि भारत की निन्यानवे प्रतिशत जनता राजनैतिक रूप से गुलाम है, अधिकार शुन्य है और एक प्रतिशत राजनेता सर्वाधिकार सम्पन्न है। अभी–अभी आन्ध्र के एक विधायक के एक वोट के बदले पांच करोड रूपये घूस की चर्चा यह सिद्ध करती है कि सामान्य नागरिक और राजनीति से जुडे नागरिक के बीच कितनी अधिकारों की असमानता है। गॉधी परिवार गॉव को शक्तिशाली देखना चाहते थे, और नेहरू अम्बेडकर शहरो को। यदि इतना अन्तर होते हुए भी किसी व्यक्ति को नेहरू में एक पक्षीय प्रशंसा के गुण दिखते हैं तो अवश्य ही उस व्यक्ति की नीयत पर संदेह होता है। हम तो आज यहॉ तक देख रहे है कि वोटो की लालच मे संघ परिवार के लोग भी अम्बेडकर जैसे स्वार्थी तत्व को भगवान बनाने पर तुले हुए हैं। जहॉ तक सरदार पटेल और नेहरू की तुलना का प्रश्न है तो दोनो में नेहरू, पटेल की तुलना मे अधिक अच्छे विचारक दिखते हैं। पटेल उच्च राष्ट्र भक्त थे और नेहरू में कुछ अंतराष्ट्रीय सोच भी थी। यह सही है कि कश्मीर की समस्या नेहरू के कारण उलझी और पटेल सुलझा लेते किन्तु यदि पटेल प्रधानमंत्री होते तो यह भी सम्भव है कि भारत किसी विश्व युद्ध मे फसकर बरबाद हो जाता। युद्ध लोलुपता हमेशा ही फायदा नही देती है। कभी–कभी उससे भयंकर नुकसान भी सम्भव है। साम्प्रदायिकता के मामले मे भी नेहरू मुसलमानो की ओर अधिक झुके हुए थे। और पटेल हिन्दुओं की ओर। दोनों ही इस मामले मे गलत थे। श्रम और बुद्धि के बीच तुलना करे तो एक मात्र गॉधी ही श्रम, बुद्धि और धन के बीच श्रम को महत्व देने के पक्षधर थे, अन्यथा अम्बेडकर और नेहरू तो श्रम को कमजोर करके बुद्धि और धन के प्रभाव को बढाना चाहते थे। यही कारण है कि गॉधी ने श्रम को महत्व दिया और नेहरू अम्बेडकर ने शिक्षा को।

आपने गलत लिखा है कि नेहरू की आलोचना उनके आजादी के योगदान मे हो रही है। सच बात यह है कि नेहरू की आलोचना उनके आजादी के बाद के योगदान से हो रही हैं। यह अवश्य सत्य है कि स्वतंत्रता के समय नेहरू ने पटेल की अपेक्षा आंशिक रूप से अधिक सत्ता लोलुपता का प्रदर्शन किया। यदि उस समय नेहरू ने गॉधी की यह बात मान ली होती तो कांग्रेस को भंग करके सब लोग स्वतंत्र रूप से प्रतिस्पर्धा करे तो नेहरू को यह बात न मानने का कारण सत्ता लोलुपता नहीं थी तो और क्या थी। यह सच है कि स्वतंत्रता के समय भारत मे औसत उम्र 32 वर्ष थी और अब 65 वर्ष। नेहरू ने बहुत परिश्रम किया। यह भी सच है कि नेहरू ने हिन्दु साम्प्रदायिकता से खुली टक्कर ली। यह भी सच है कि नेहरू ने मिश्रित अर्थव्यवस्था का पक्ष लिया। आर्थिक राजनैतिक दृष्टि से नेहरू को सफल मानते हुए भी यदि भारत मे आज चरित्र बहुत तेजी से गिरा है तो इसका दोष किसे दिया जाए। सन् 47 की अपेक्षा भ्रष्टाचार कई गुना बढ गया। ग्यारह समस्याए चोरी, डकैती, लुट, बलात्कार, मिलावट, कमतौल, जालसाजी, धोखाधडी, हिंसा, आतंकवाद, चरित्रपतन, साम्प्रदायिकता, जातीय कटुता, आर्थिक असमानता और श्रम शोषण जैसी गंभीर समस्याओं का विस्तार यदि नेहरू प्रणाली की देन नहीं है तो किसकी है। क्या इसके लिए नेहरू को छोडकर गॉधी, पटेल और अम्बेडकर को दोष दिया जाए। ग्यारह समस्याओ के विस्तार की कीमत पर आपकी बतायी हुई सारी उपलब्धियों को कुल मिलाकर मैं पिछडना ही मानता हूॅ, उपलब्धि नही। मैं सोचता था कि आप सरीखे विद्वान विचारक की तरह कुछ लिखेगे चारण की तरह नहीं । लेकिन मुझे आपका लेख पढकर निराशा हुई है।